“दिलवाओ हमें फांसी, ऐलान से कहते हैं
खूं से ही हम शहीदों के, फौज बना देंगे।”

सर्वहारा प्रकाशन

"दिलवाओ हमें फांसी, ऐलान से कहते हैं
खूं से ही हम शहीदों के, फौज बना देंगे।"

सर्वहारा प्रकाशन

प्रकाशन : सर्वहारा प्रकाशन
बी– 2/128
रोहणी–17
दिल्ली– 110089

मुद्रकः प्रोग्रेसिव प्रिंटर्स
ए–21 झिलमिल इंडस्ट्रियल एरिया
जी. टी. रोड शाहदरा
दिल्ली– 110095

दिसम्बर 2023
मूल्य : 10 रुपये

“..आज हिन्दुस्तान की कश्ती बड़ी मुश्किल में है!”

“कौम पर कुर्बान होना सीख लो ऐ हिन्दियो!
जिन्दगी का राजे-मुज्मिर[1] खंजरे-कातिल में है!
साहिले-मकसूद[2] पर ले चल खुदारा नाखुदा[3]!
आज हिन्दुस्तान की कश्ती बड़ी मुश्किल में है!”

– रामप्रसाद बिस्मिल

अशफ़ाक़ उल्ला खां के अज़ीज़ दोस्त और साथी रामप्रसाद बिस्मिल ने आज से सौ साल पहले हिन्दोस्तां के हालात पर ये पंक्तियां लिखी थी। ऐसा लगता है कि उनका आह्वान और चेतावनी दोनों एक साथ आज के भारत पर भी ज्यों कि त्यों लागू होती हैं।

हिन्दुस्तान की कश्ती तब इसलिए मुश्किल में थी कि हमारा प्यारा देश उस वक्त अंग्रेजों का गुलाम था। देश गुलामी की जंजीरों में छटपटा रहा था। काकोरी के शहीद किसी भी सूरत में देश को गुलामी की जंजीरों से आजाद कराना चाहते थे। देर-सबेर शहीदों की कुर्बानी रंग लायी। और देश आजाद हुआ। देश आजाद हुआ तो धन-दौलत वालों और बड़ी-बड़ी जमीनों के मालिकों, धन्नासेठों, व्यापारियों, सूदखोरों की पौ बारह हुयी। वे अमीर से अमीर होते गये।

आजाद भारत में मजदूरों, किसानों, मेहनतकशों के हालात उतने नहीं बदल सके जितनी कि उम्मीद की गयी थी। एक तरह की गुलामी से तो आजादी मिली पर नयी तरह की गुलामी ने मजदूर-मेहनतकशों को बुरी तरह से जकड़ लिया। पहले गोरे अंग्रेजों की गुलामी थी अब काले अंग्रेजों की गुलामी है। पहले गोरे अपनी तरह से फूट डालते और राज करते थे। अब काले अंग्रेज फूट डालने और राज करने के, एक से बढ़कर एक, नये-नये तरीके इजाद करते गये। हालात इतने खराब होते गये कि अब भारत पर “**काली गुलामी**” का खतरा मंडराने लगा है। यह खतरा विशेष तौर पर मोदी के सत्ता पर काबिज होने के बाद से बढ़ा है।

“काली गुलामी” का खतरा हर वह शख्स महसूस कर रहा है जिसने काले कृषि कानूनों के खिलाफ पैदा हुए ऐतिहासिक किसान आन्दोलन में भागेदारी की। या फिर हर उस

---

1. रहस्य छिपाने वाला 2. प्रेमी के पास 3. नाविक

इंसाफपसन्द इन्सान ने इस ''काली गुलामी'' को अपने सिर पर मण्डराते देखा जिसने नागरिकता (संशोधन) अधिनियम-सीएए के देशव्यापी आन्दोलन में हिस्सा लिया। इस ''काली गुलामी'' ने हर उस आदमी को चिन्ता-परेशानी में डाला जिसने नरेन्द्र दाभोलकर, गोविंद पानसरे, गौरी लंकेश की सरेआम हत्या की खबर सुनी। उन सबको यह सोचने को मजबूर कर दिया कि आज हिन्द किस दिशा में बढ़ रहा है जहां ''हिन्दू राष्ट्र'' के नाम पर अख़लाक, पहलू खान आदि न जाने कितने आम मेहनतकश मुसलमानों को सरेआम कत्ल कर दिया गया है। पिछले कुछ वर्षों में दर्जनों गिरजाघरों को आग के हवाले कर दिया गया है। देश के धार्मिक अल्पसंख्यक चुप रहते हैं तो बेमौत मारे जा रहे हैं और बोलते हैं तो उन्हें तुरन्त आतंकवादी घोषित कर दिया जाता है।

''काली गुलामी'' का एक उदाहरण नई श्रम संहिताएं हैं। भारत के मजदूरों ने एक लम्बी लड़ाई लड़कर कई अधिकार हासिल किये थे। मोदी सरकार ने नई श्रम संहिताएं बनाकर इन अधिकारों को छीनकर मजदूरों को लगभग भारत की गुलामी के दिनों में धकेल दिया है। नई श्रम संहिताओं के लागू होने के बाद मजदूरों का शोषण-उत्पीड़न इतना अधिक बढ़ जायेगा कि अंग्रेजों के गुलामी वाले दिन याद आने लगेंगे।

''काली गुलामी'' जिस दिन पूरे भारत पर ढंग से छा जायेगी उस दिन आम मजदूर-मेहनतकशों से वे सब अधिकार छीन लिये जायेंगे जो उन्होंने लम्बी लड़ाई कर गोरे-काले अंग्रेजों से हासिल किये थे। ''काली गुलामी'' लाने वाले ऐसा क्यों कर रहे हैं। वे ऐसा इसलिए कर रहे हैं ताकि उनके आका इनसे खुश रहें। इनके आका गोरे-काले अंग्रेज ही हैं। बड़े-बड़े इजारेदार और सरमायेदार ही हैं। अम्बानी-अडाणी-टाटा, बिल गेट्स-सुजुकी-एलन मस्क जैसे ''काली गुलामी'' लाने वालों के आका है।

''काली गुलामी'' जिस दिन भारत पर छायेगी उस दिन न हमारे पास संगठन, राजनैतिक पार्टी-ट्रेड यूनियन बनाने का अधिकार होगा और न ही हम खुलेआम सभा-जुलूस-प्रदर्शन कर सकेंगे। न वोट देने का अधिकार होगा और न सरकार की आलोचना का अधिकार होगा। बोलने-लिखने-पढ़ने पर किस्म-किस्म की पाबंदी होगी। नंगी तानाशाही में चुपचाप काम करना होगा। नये-नये युद्ध ''काली गुलामी'' लाने वाले देश व राष्ट्र के नाम पर लड़ेंगे। 'अखण्ड भारत', 'विश्वगुरू', 'महान गौरवशाली राष्ट्र' आदि के नाम पर मजदूर-मेहनतकशों को मजबूर किया जायेगा कि वह रात-दिन अपना खून-पसीना बहायें। ''काली गुलामी'' लाने वाले दिन के उजाले में सावरकर-हेडगेवार की पूजा करते हैं तो रात के अंधेरे में हिटलर-मुसोलिनी के नाम की माला जपते हैं।

आजाद भारत का सफर मजदूर मेहनतकशों के लिए नई गुलामी से ''काली गुलामी'' का सफर बनता जा रहा है।

अशफाक उल्ला खां को शायद यह अंदेशा था कि यदि गोरे अंग्रेज चले जायेंगे और

काले अंग्रेज भारत में राज करेंगे तो क्या होगा। और शायद इसलिए वे ऐसा आजाद भारत चाहते थे जहां बराबरी हो। अमीर-गरीब न हों। लूट-खसोट न हो। जुल्म-अत्याचार न हो। शोषण-उत्पीड़न न हो। वे ऐसा हिन्दोस्तां चाहते थे जहां मनुष्यों के बीच धर्म-जाति-नस्ल के झगड़े न हों। सारे मनुष्य बराबर हों। उन्होंने एक ओर यह लिखा,

''अगर हिन्दुस्तान आजाद हुआ और बजाय हमारे गोरे आकाओं के हमारे वतनी भाई सल्तनत व हुकूमत की बागडोर अपने हाथ में ले लें और तफरीकोतमीज- अमीर व गरीब, जमींदार व काश्तकार में रहे तो ऐ खुदा ऐसी आजादी उस वक्त न देना जब तक तेरी मखलूक में मसावत (बराबरी) कायम न हो जाये। मेरे इन ख्यालात से मुझको इश्तिराकी (कम्युनिस्ट) समझा जाये तो मुझे इसकी फिकर नहीं।''

तो दूसरी ओर अशफ़ाक़ उल्ला खां ने बताया कि जो जोंक की तरह दूसरों का खून चूसते हैं, उनके खिलाफ जंग फर्ज (कर्त्तव्य) है। वे कहते हैं,

''लूटेरा लूट से, जालिम जुल्म से अपना पेट पालते हैं, वकील मुवक्किलों से, जमींदार काश्तकारों से, सरमायादार मजदूरों से जोंक की तरह चिमट कर उनका खून चूसते हैं और कमजोर हैं, इसलिए लुट जाते हैं। इसका खात्मा करना निहायत जरूरी है और उसके खिलाफ जंग फर्ज है।''

क्या अशफ़ाक़ उल्ला खां का अंदेशा सही नहीं साबित हुआ कि आजाद हिन्दुस्तान में गोरे आकाओं से सत्ता सरमायेदारों (पूंजीपतियों) व भू-स्वामियों के हाथों में आ गई थी। और फिर लूट, जुल्म, खून चूसने का जो सिलसिला गोरे आकाओं के जमाने में था वह आज तक जारी है। अब उससे भी बुरी बात यह कि देश पर ''काली गुलामी'' का खतरा मण्डरा रहा है। तेजी से आगे बढ़ता हिन्दू फासीवाद हिंदोस्ता की कश्ती को नयी मुश्किल में डाल रहा है। ''काली गुलामी'' की खास बात यह है कि इनके राज में लूट, जुल्म, खून चूसना उस जगह पहुंच रहा है जहां इससे निजात पाने के लिए इंकलाब के सिवा और कोई रास्ता नहीं बचा है। ''काली गुलामी'' के खिलाफ जंग हमारा सबसे पहला फर्ज बन गया है।

इस फर्ज का रास्ता भारत के उन अमर शहीदों को याद करने; उनकी कुर्बानी से प्रेरणा लेने; उनके विचारों को गहराई से पढ़ने-समझने; उनकी दिखायी राह पर चलने से होकर जाता है।

इस पुस्तिका को प्रकाशित करने का हमारा मकसद ही यह है कि हम अपने देश के महान क्रांतिकारियों के जीवन, विचारों से परिचित हों। 'मुश्किल में फंसी देश की कश्ती' को बाहर निकालें। एक ऐसा समाज बनायें जिसका सपना अशफ़ाक़ उल्ला खां, रामप्रसाद बिस्मिल, भगतसिंह, ने देखा था। ऐसा समाज जहां शोषण, उत्पीड़न, जुल्म, अत्याचार का नामोनिशां न हो।

इस पुस्तिका में पहले तीन लेख काकोरी के शहीदों पर हैं। 'काकोरी के वीरों से

परिचय, 'काकोरी के शहीदों के फांसी के हालात' शहीद-ए-आजम भगत सिंह के लिखे हुए हैं तथा तीसरा लेख 'काकोरी के शहीदों के लिए प्रेम के आंसू' भगत सिंह के साथी भगवती चरण बोहरा का लिखा हुआ है। ये लेख ऐतिहासिक दस्तावेज का दर्जा रखते हैं। ये लेख 'भगत सिंह और उनके साथियों के सम्पूर्ण उपलब्ध दस्तावेज' नामक पुस्तक (प्रका.- राहुल फाउंडेशन, लखनऊ) से लिये गये हैं। ये लेख इस बात के प्रमाण हैं कि एक क्रांतिकारी दूसरे क्रांतिकारियों को कैसे याद करते हैं। इन लेखों को पढ़ते हुए एक बारगी पूरे शरीर में विद्युत (करेण्ट) सा दौड़ने लगता है। हर सच्चा दिल यही कहने लगता है कि शहीदों की दिखाई राह पर चलकर ही हमारे देश का उत्थान हो सकता है। 'नई गुलामी', 'काली गुलामी' से मुक्ति मिल सकती है।

चौथा लेख 'शहीद अशफ़ाक़ उल्ला खां का फांसीघर से सन्देश' है। इस सन्देश में अशफ़ाक़ उल्ला खां कहते हैं, ''हिन्दुस्तानी भाइयो! आप चाहे किसी धर्म या सम्प्रदाय को मानने वाले हो, देश के काम में साथ दो। व्यर्थ आपस में न लड़ो।''

अशफ़ाक़ उल्ला खां का एक संक्षिप्त जीवन परिचय 'तेरा जीना तेरे मरने की बदौलत होगा' शीर्षक से दिया गया है।

अपनी आत्मकथा में रामप्रसाद बिस्मिल ने अशफ़ाक़ को याद करते हुए जो लिखा है वह भी बहुत प्रेरणादायक है। उसका एक अंश भी यहां दिया गया है।

अशफ़ाक़ उल्ला खां एक अच्छे शायर भी थे। उनकी कुछ प्रसिद्ध रचनाएं आगे दी गयी हैं।

अंत में, एक लेख इस विषय पर है कि क्यों अशफाक उल्ला खां को बार-बार याद करने की जरूरत है। क्यों अशफ़ाक़ उल्ला खां को स्थापित करने की जरूरत है। अशफ़ाक़ उल्ला खां जो कि काकोरी के अमर शहीदों में एक चमकते सितारे थे कि चर्चा आज के दौर में हर ओर करने की जरूरत है। ''काली गुलामी'' लाने वालों को भारत के अमर शहीदों के जीवन, लेखन, विचारों से बहुत-बहुत डर लगता है। उन्हें लगता है जिस दिन भारत के मजदूर, किसान, मेहनतकश, नौजवान, छात्र अमर शहीदों के दिखाये रास्ते पर चलने लगेंगे उस दिन उनका सारा भाण्डा फूट जायेगा। इन काली ताकतों को भारत तो क्या पूरी धरती में भी कहीं पनाह नहीं मिलेगी। कोई इनका नामलेवा तक नहीं बचेगा।

वक्त आ गया है कि बिना वक्त गंवाये हम वक्त की पुकार को सुनें और पूरे दिलो-दिमाग से शहीदों के दिखाये रास्ते में आगे बढ़ें!

काकोरी के वीरों से परिचय

(9 अगस्त, 1925 को शहीद रामप्रसाद बिस्मिल, अशफ़ाक़ उल्ला और उनके अन्य क्रान्तिकारी साथियों ने क्रान्तिकारी पार्टी के लिए धन इकट्ठा करने के उद्देश्य से लखनऊ के करीब काकोरी के पास रेलगाड़ी रोक सरकारी खजाना लूटा। इसके बाद चन्द्रशेखर आजाद के अलावा बाकी सभी क्रान्तिकारी पकड़े गये। भगतसिंह भी तब कानुपर निवास के समय हिन्दुस्तान रिपब्लिकन पार्टी में भरती हो चुके थे।

'विद्रोही' नाम से मई, 1927 में भगतसिंह ने 'काकोरी के वीरों से परिचय' शीर्षक लेख पंजाबी में छपवाया। उस लेख के छपते ही भगतसिंह को गिरफ्तार कर लिया गया। चारपाई पर हथकड़ी लगे बैठे भगत सिंह का प्रसिद्ध चित्र इसी गिरफ्तारी के समय लिया गया। इससे पहले भगतसिंह पंजाब लौटकर शचीन्द्रनाथ सान्याल की पुस्तक 'बन्दी जीवन' का पंजाबी अनुवाद छपवा चुके थे। – स.)

पहले 'किरती' (पंजाबी पत्रिका) में काकोरी से सम्बन्धित कुछ लिखा जा चुका है। आज हम काकोरी षड्यन्त्र और उन वीरों के सम्बन्ध में कुछ लिखेंगे जिन्हें उस सम्बन्ध में कड़ी सजाएँ मिली हैं।

9 अगस्त, 1925 को एक छोटे-से स्टेशन काकोरी से एक पैसेंजर ट्रेन चली। यह स्टेशन लखनऊ से आठ मील की दूरी पर है। ट्रेन मील-डेढ़ मील चली होगी कि सेकेण्ड क्लास में बैठे हुए तीन नौजवानों ने गाड़ी रोक ली और दूसरों ने मिलकर गाड़ी में जा रहा सरकारी खजाना लूट लिया। उन्होंने पहले ही जोर से आवाज देकर सभी यात्रियों को समझा दिया था कि वे डरें नहीं, क्योंकि उनका उद्देश्य यात्रियों को तंग करने का नहीं, सिर्फ सरकारी खजाना लूटने का है। खैर, वे गोलियाँ चलाते रहे। वह (कोई यात्री) आदमी गाड़ी से उतर पड़ा और गोली लग जाने से मर गया।

सरकारी अधिकारी हार्टन, सी.आई.डी. इसकी जाँच में लगा। उसे पहले से ही यकीन हो गया था कि यह डाका क्रान्तिकारी जत्थे का काम है। उसने सभी सन्दिग्ध व्यक्तियों की छान-बीन शुरू कर दी। इतने में क्रान्तिकारी जत्थे की राज्य परिषद की एक बैठक मेरठ में होनी तय हुई। सरकार को इसका पता चल गया। वहाँ खूब छानबीन की गयी।

फिर सितम्बर के अन्त में हार्टन ने गिरफ्तारियों के वारण्ट जारी किये और 26 सितम्बर को बहुत-सी तलाशियाँ ली गयीं और बहुत-से व्यक्ति पकड़ लिये गये। कुछ नहीं पकड़े गये। उनमें से एक श्री राजेन्द्र लाहिड़ी दक्षिणेश्वर बम केस में पकड़े गये और वहीं उन्हें दस बरस कैद हो गयी। और श्री अशफाक उल्ला और शचीन्द्र बख्शी बाद में पकड़े गये, जिन पर अलग मुकदमा चला।

जज के फैसले से यह पता चलता है कि असहयोग आन्दोलन दब जाने से देशभक्त युवकों का शान्ति से विश्वास उठ गया और उन्होंने युगान्तर दल स्थापित किया। श्री जोगेशचन्द्र चट्टोपाध्याय बंगाल से इस दल का संगठन बनाने यू.पी. आये और पक्का काम कर सितम्बर, 1924 में लौट गये। उस समय बंगाल में आर्डिनेंस पास हो चुका था और आप लौटते ही हावड़ा पुल पर पकड़े गये। तलाशी लेने पर आपकी जेब से एक कागज मिला, जिस पर यू.पी. की राज्य परिषद की किसी बैठक का और यू.पी. में अपने दल के संगठन का हाल लिखा हुआ था। खैर, फिर काम चल पड़ा और काम चलाने की खातिर कई डकैतियाँ भी की गयीं। जज के विचार में इस दल के नेता हैं -श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल।

श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल का नाम किससे छिपा है। आप ही 'बन्दी जीवन' जैसी प्रसिद्ध व शानदार पुस्तक के लेखक हैं। बनारस के निवासी हैं और 1915 के गदर आन्दोलन में आपने खूब काम किया था। आप बनारस षड्यन्त्र के नेता व श्री रासबिहारी जी का दायाँ हाथ थे। तब उम्रकैद हुई थी लेकिन 1920 में छूट गये थे। फिर आप अपने पिछले काम पर ही जुट गये और सन् 1925 के शुरू में 'दि रेवल्यूशनरी' परचा एक ही दिन में सारे हिन्दुस्तान में बँटा। उसकी भाषा व अच्छे विचारों की अंग्रेजी अखबारों ने भी खूब तारीफ की थी। आप फरवरी में पकड़े गये। आप पर उस सम्बन्ध में मुकदमा चलाया गया और आपको दो साल कैद की सजा मिली। वहीं से आपको काकोरी के मुकदमे में घसीट लिया गया। आप बड़े जिन्दादिल हैं। कोर्ट में स्वयं खुश रहना और दूसरों को खुश रखना ही आपका काम था। आप ने अपना मामला स्वयं लड़ा। जज आपको ही सबका गुरु कहता है। 'बन्दी जीवन' का गुजराती व पंजाबी में अनुवाद हो चुका है।

आप अंग्रेजी और बंगाली के उच्च कोटि के लेखक हैं। अब आपको दो उम्रकैद हो गयी है।

आपके साथ आपका छोटा भाई भूपेन्द्रनाथ सान्याल भी घसीट लिया गया। वह करीब बी.ए. में पढ़ता था। पकड़ा गया और उसे पाँच साल की कैद हो गयी।

श्री शचीन्द्र के बाद अत्यन्त प्रसिद्ध वीर श्री रामप्रसाद हैं। आप जैसा सुन्दर, मजबूत जवान खोजने से मिलना भी मुश्किल है। बहुत योग्य आदमी है। हिन्दी का बड़ा लेखक है। आपने 'कैथराइन', 'बोल्शेविकों के काम', 'मन की लहर' आदि अनेक पुस्तकें लिखीं। आप उर्दू के माने हुए शायर हैं। आपकी उम्र 28 बरस की है। पहले 1919 में मैनपुरी षड्यन्त्र में आपके वारण्ट निकले और आपके गुरु श्री गेंदालाल जी आदि पकड़े गये, लेकिन आप नेपाल की ओर

चले गये और वहाँ बड़ी मुश्किलें सहन कर गुजारा करते रहे। पूरा दिन हल चलाना, कुदाल चलाना, मेहनत-मशक्कत करना और रात में सिर्फ डेढ़ आना पाना, जिससे पेटभर रोटी भी नहीं खा सकते थे। कई बार तो घास तक खाना पड़ा। लेकिन मजा यह, फिर भी बैठकर कविता लिखना, और भारतमाता की याद और प्रेम में आँसू बहाने और गीत गाने। ऐसे नौजवान कहाँ से मिल सकते हैं? आप युद्ध-विद्या में बड़े कुशल हैं और आज उन्हें फाँसी का दण्ड मिलने का कारण भी बहुत हद तक यही है। इस वीर को फाँसी का दण्ड मिला और आप हँस दिये। ऐसा निर्भीक वीर, ऐसा सुन्दर जवान, ऐसा योग्य और उच्चकोटि का लेखक और निर्भय योद्धा मिलना मुश्किल है।

तीसरे वीर श्री राजिन्द्रनाथ लाहिड़ी हैं। 24 वर्ष का अत्यन्त सुन्दर जवान एम.ए., बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय का विद्यार्थी था। जज कहता है कि यह युगान्तर दल का एक मजबूत स्तम्भ है। आप गाड़ी रोकने वालों में थे। बाहर से था -कमजोर सूखा-सा। कलकत्ते के पास दक्षिणेश्वर बम फैक्टरी में पकड़ा गया, वहीं दस साल कैद हुई। खुशी में मोटा होने लगा। काकोरी के मुकदमे में तो शरीर खूब भर गया था और अब फाँसी की सजा हो गयी है।

वीर रोशन सिंह को भी फाँसी की सजा हुई है। आप पहले पुलिस की मदद करते थे और बहुत-से डकैत आपने पकड़वाये थे। आप भी फँस गये। लेकिन कोई डकैत तो नहीं है। जज भी कहता है, यह नौजवान सच्चे देशसेवक थे! अच्छा! इस वीर को भी बार-बार नमस्कार।

इसके बाद श्री मन्मथनाथ गुप्त की बारी है। आप काशी विद्यापीठ के बी.ए. के विद्यार्थी थे। 18 बरस की उम्र है। बंगाली, गुजराती, मराठी, उड़िया, हिन्दी, अंग्रेजी और फ्रेंच आदि अनेक भाषाएँ आपने सीख ली थीं। जज ने आपको भी डकैतियों में शामिल कर 14 साल की सख्त सजा दी है। आप बड़े निर्भय हैं और यह सजा सुनकर हँस दिये। आजकल जेल में भूख हड़ताल किये बैठे हैं। आपसे गैर-सरकारी सदस्य ने जेल में आकर पूछा कि खाना क्यों नहीं खाते, तो आपने उत्तर दिया कि हम मनुष्य हैं। हमारे साथ मनुष्यों जैसा व्यवहार होना चाहिए। मैं नहीं समझता कि इस पशुओं जैसे व्यवहार को सहन कर मैं 14 साल तक जी सकूँगा। तिल-तिल कर मरने से एक बार मर जाना अच्छा है। आप पहले असहयोग में भी जेल जा चुके हैं।

अब जिस नौजवान का जिक्र होगा उसे यदि हम महापुरुष कह दें तो कुछ झूठ न होगा। वह वीर श्री जोगेशचन्द्र चटर्जी हैं। आप कोमिल्ला (ढाका) के रहने वाले हैं। वह बी.ए. में फिलासफी के विद्यार्थी थे। प्रोफेसर आप पर बहुत खुश थे और कहते थे कि लड़का बड़ा होनहार है। लेकिन आपने कॉलेज तो क्या, पूरी दुनिया की फिलासफी पर लात मार दी और सबकुछ छोड़कर युगान्तर दल में जा मिले। आपको डिफेंस ऑफ इण्डिया एक्ट के अनुसार गिरफ्तार किया गया और अकथनीय व असहनीय कष्ट दिये गये। एक दिन आपके सर पर पाखाना डाल दिया गया और चार दिन तक कोठरी में बन्द रखा गया। मुँह धोने तक के लिए पानी नहीं दिया गया और बुरी तरह मार-मारकर पूरा बदन जख्मी कर दिया गया। लेकिन आपके पास चुप से

अधिक क्या रखा था।

1920 में छूटे तो एक मामूली कार्यकर्ता की तरह कांग्रेस में काम करते रहे। घर से गरीब हैं, लेकिन अपना घर तबाह करके भी दुनिया में सेवा होती है। आप 1923 में यू.पी. आये और फिर 'युगान्तर' दल की नींव रखी। 1924 में बंगाल लौट गये और पकड़े गये। पहले आपको आर्डिनेंस के तहत पकड़ा था, फिर यहाँ काकोरी लाया गया। आपको दस बरस कैद हुई है। बेहद खूबसूरत नौजवान हैं। जज ने आपकी बड़ी तारीफ की है।

श्री गोविन्द चरणकार उर्फ डी.एन.चौधरी लखनऊ से पकड़े गये थे। आप बहुत पुराने क्रान्तिकारी हैं। 1918 या 1919 में ढाका में पुलिस आपको पकड़ने आयी। आपने गोलियों का जवाब गोलियों से दिया और गोलियों में से लड़ते-लड़ाते भाग निकले, लेकिन गोलियाँ खत्म हो चुकी थीं और आप घायल हो गये थे। पकड़े गये, कालापानी मिला। 1922 में बहुत बीमार हो गये थे, तब छोड़े गये। 1925 में फिर पकड़े गये और अब 10 साल कैद हो गयी है।

अब श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य सम्बन्धी कुछ लिखेंगे। आप भी बनारस के रहने वाले थे। बनारस षड्यन्त्र के समय आपकी उम्र 16 बरस की थी, पकड़े गये। लेकिन कुछ प्रमाणित न होने से छूट गये और फिर नजरबन्द कर बुन्देलखण्ड में रखे गये। आप हिन्दी के बड़े प्रसिद्ध लेखक हैं। कानपुर के 'प्रताप' जैसे प्रसिद्ध अखबार के सहायक सम्पादक थे। आप बनारस से पकड़े गये और अब आपको सात साल कैद हुई है। आप बहुत सुन्दर गाते हैं। जेल में आप योगाभ्यास करते थे।

श्री राजकुमार कानपुर के रहने वाले हैं। आप बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में बी.ए. में पढ़ते थे। पकड़े गये। आपके कमरे से दो रायफलें निकलीं। बहुत सुन्दर गाने वाले और देखने में भी आप काफी सुन्दर हैं। जोशीले बहुत हैं। श्री दामोदर स्वरूप जब बहुत बीमार होने पर भी कोर्ट में बुलाये गये तो आपको जोश आ गया और आपने जज को खूब सुनायी। जज ने कहा कि फैसले के समय तुम्हें इसका मजा चखाया जायेगा। वीर युवक को दस साल की सजा हो गयी! जीवन एक तरह से तबाह हो गया, लेकिन आप हँस दिये। धन्य हैं ये वीर और इन्हें जन्म देने वाली वीर माताएँ।

श्री विष्णु शरण दुबलिस मेरठ के रहने वाले हैं। वैश्य अनाथालय के अधीक्षक थे। बी. ए. में असहयोग कर दिया गया था और मेरठ को उन्होंने दूसरा बारदोली बना दिया था। सिविल नाफरमानी के लिए तैयार हो गये थे। बड़े सुन्दर वक्ता थे। आपके घर युगान्तरकारियों की बैठक हुई थी। आपको सात साल की सजा हो गयी है।

श्री रामदुलारे को भी 7 साल की सजा हुई है। आप कानपुर निवासी थे। स्काउट मास्टर, कांग्रेस के जोशीले सेवक थे।

6 अप्रैल को फैसला सुनाया गया, उस दिन सभी वीर गाते आये थे -

सरफरोशी की तमन्ना, अब हमारे दिल में है,

देखना है जोर कितना बाजु-ए-कातिल में है!

सजाएँ लापरवाही से सुनीं और हँस दिये। उसके बाद दुख की घड़ी आ गयी। जिन वीरों ने एक साथ समुद्र में किश्तियाँ डाली थीं, उनके ही अलग होने का पल आ गया। ''क्रान्तिकारी लोगों में जो अगाध और गम्भीर प्रेम होता है, उसे साधारण दुनियादार आदमी अनुभव नहीं कर सकते,'' श्री रासबिहारी के इस वाक्य का अर्थ भी हम लोग नहीं समझ सकते। जिन लोगों ने 'सिर रख तली प्रेम की गली' में पैर रख दिया हो, उनकी महिमा को हमारे जैसे निकृष्ट आदमी क्या समझ सकते हैं? उनका परस्पर प्रेम कितना गहन होता है, उसे हम सपने में भी नहीं जान सकते। डेढ़ साल से अपने जीवन के अन्धकारमय भविष्य के इन्तजार में मिलकर बैठे थे। वह पल आया, तीन को फाँसी, एक को उम्रकैद, एक को 14 बरस कैद, 4 को दस बरस कैद व बाकियों को 5 से 10 साल की सख्त कैद सुनाकर जज उन्हें उपदेश देने लगा, ''आप सच्चे सेवक और त्यागी हो। लेकिन गलत रास्ते पर चले हो।'' गरीब भारत में ही सच्चे देशभक्तों का यह हाल होता है। जज उन्हें अपने कामों पर पुनर्विचार करने की बात कह चलता बना और फिर-फिर क्या हुआ? क्या पूछते हैं? जुदाई के पल बड़े बुरे होते हैं। जिन्हें फाँसी की सजा मिल गयी, जिन्हें उम्रभर के लिए जेल में बन्द कर दिया गया, उनके दिलों का हाल हम नहीं समझ सकते। कदम-कदम पर रोने वाले हिन्दुस्तानी, यों ही थर-थर काँपने लग जाने वाले कायर हिन्दुस्तानी, उन्हें क्या समझ सकते हैं? छोटों ने बड़ों के पैरों पर झुककर नमस्कार किया। उन्होंने छोटों को आशीर्वाद दिया, जोर से गले मिले और आह भरकर रह गये। भेज दिये गये। जाते हुए श्री रामप्रसाद जी ने बड़े दर्दनाक लहजे में कहा –

दरो-दीवार[1] पे हसरत से नजर करते हैं।
खुश रहो अहले-वतन[2] हम तो सफर करते हैं।

यह कहकर वह लम्बी, बड़ी दूर की यात्रा पर चले गये। दरवाजे से निकलते समय उस अदालत के बड़े भारी रैंकन थियेटर हाल की भयावह चुप्पी को एक आह भरकर तोड़ते हुए उन्होंने फिर कहा –

हाय, हम जिस पर भी तैयार थे मर जाने को।
जीते जी हमसे छुड़ाया उसी काशाने[3] को।

हम लोग एक आह भरकर समझ लेते हैं कि हमारा फर्ज पूरा हो गया। हमें आग नहीं लग उठती, हम तड़प नहीं उठते, हम इतना मुर्दे हो गये हैं। आज वे भूख-हड़ताल कर बैठे हैं और तड़प रहे हैं और हम चुपचाप सब तमाशा देख रहे हैं। ईश्वर उन्हें बल व शक्ति दे कि वे वीरता से अपने दिन पूरे करें और उन वीरों के बलिदान रंग लायें।

लेखक
'विद्रोही'

---

1. दरवाजा और दीवार   2. देशवासी   3. घोंसला

काकोरी के शहीदों की फाँसी के हालात

(जनवरी, 1928 के 'किरती' में भगतसिंह ने एक और लेख काकोरी के शहीदों के बारे में 'विद्रोही' के नाम से लिखा। - स.)

'किरती' के पाठकों को पहले किसी अंक में हम काकोरी के मुकदमे के हालात बता चुके हैं। अब इन चार वीरों को फाँसी दिये जाने का हाल बताते हैं।

17 दिसम्बर, 1927 को श्री राजिन्द्रनाथ लाहिड़ी को गोण्डा जेल में फाँसी दी गयी और 19 दिसम्बर, 1927 को श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल' को गोरखपुर जेल में, श्री अशफ़ाक़ उल्ला को फैजाबाद जेल में और श्री रोशन सिंह जी को इलाहाबाद जेल में फाँसी चढ़ा दिया गया।

इस मुकदमे के सेशन जज मि. हेमिल्टन ने फैसला देते हुए कहा था कि ये नौजवान देशभक्त हैं और इन्होंने अपने किसी लाभ के लिए कुछ भी नहीं किया और यदि ये नौजवान अपने किये पर पश्चाताप करें तो उनकी सजाओं में रियायत की जा सकती है। उन चारों वीरों द्वारा इस आशय की घोषणा भी हुई, लेकिन उन्हें फाँसी दिये बगैर डायन नौकरशाही को चैन कैसे पड़ता। अपील में बहुत-से लोगों की सजाएँ बढ़ा दी गयीं। फिर न तो गवर्नर और न ही वायसराय ने उनकी जवानी की ओर ध्यान दिया और प्रिवी कौंसिल ने उनकी अपील सुनने से पहले ही खारिज कर दी। यू.पी. कौंसिल के बहुत-से सदस्यों, असेम्बली और कौंसिल और स्टेट के बहुत-से सदस्यों ने वायसराय को उनकी जवानी पर दया करने की दरख्वास्त दी, लेकिन होना क्या था? उनके इतने हाथ-पाँव मारने का कोई परिणाम न निकला। यू.पी. कौंसिल के स्वराज पार्टी के नेता श्री गोविन्द वल्लभ पन्त उनके मामले पर बहस के लिए अपना मत वायसराय और लाट साहिब को भेजने के लिए शोर मचा रहे थे। पहले तो प्रेजिडेण्ट साहिब ही अनुमति नहीं दे रहे थे, लेकिन बहुत-से सदस्यों ने मिलकर कहा तो सोमवार को बहस के लिए इजाजत मिली, लेकिन फिर छोटे अंग्रेज अध्यक्ष ने, जो उस समय अध्यक्ष का काम कर रहा था, सोमवार को कौंसिल की छुट्टी ही कर दी। होम मेम्बर नवाब छत्तारी के दर पर जा चिल्लाये, लेकिन उनके कानों पर जूँ तक न सरकी। और कौंसिल में उनके सम्बन्ध में एक शब्द भी न कहा जा सका और उन्हें फाँसी पर लटका ही दिया गया। इसी क्रोध में नीचता के साथ रूसी जार और फ्रांसीसी लुइस बादशाह होनहार युवकों को फाँसी पर लटका-लटकाकर दिलों की भड़ास निकालते रहे लेकिन उनके राज्यों की नींवें खोखली हो गयी थीं और उनके तख्ते पलट गये। इसी गलत तरीके का आज फिर इस्तेमाल हो रहा है।

देखें यदि इस बार इनकी मुरादें पूरी हों। नीचे हम उन चारों वीरों के हालात संक्षेप में लिखते हैं, जिससे यह पता चले कि ये अमूल्य रत्न मौत के सामने खड़े होते हुए भी किस बहादुरी से हँस रहे थे।

श्री राजिन्द्रनाथ लाहिड़ी

आप हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस के एम.ए. के छात्र थे। 1925 में कलकत्ते के पास दक्षिणेश्वर बम फैक्टरी पकड़ी गयी थी, उसमें आप भी पकड़े गये थे और आपको सात बरस की कैद हो गयी थी। वहीं से आपको लखनऊ लाया गया और काकोरी केस में आपको फाँसी की सजा दे दी गयी। आपको बाराबंकी और गोण्डा जेलों में रखा गया। आप मौत को सामने देख घबराते नहीं थे, बल्कि हमेशा हँसते रहते थे। आपका स्वभाव बड़ा हँसमुख और निर्भय था। आप मौत का मजाक उड़ाते रहते थे। आपके दो पत्र हमारे सामने हैं। एक छह अक्टूबर को तब लिखा था जब वायसराय ने रहम की दरख्वास्त नामंजूर कर दी थी। आप लिखते हैं –

छह महीने बाराबंकी और गोण्डा की काल-कोठरियों में रहने के बाद आज मुझे बताया गया है कि एक हफ्ते के भीतर फाँसी दे दी जायेगी, क्योंकि वायसराय ने दरख्वास्त नामंजूर कर दी है। अब मैं फर्ज समझता हूँ कि अपने इन मित्रों का (यहाँ उनके नाम हैं) धन्यवाद कर जाऊँ जिन्होंने मेरे लिए बहुत-सी कोशिशें कीं। आप मेरा अन्तिम नमस्कार स्वीकार करें। हमारे लिए मरना-जीना पुराने कपड़े बदलने से अधिक कुछ भी नहीं (यहाँ जेलवालों ने कुछ काट-छाँट की है, जो बिल्कुल पढ़ा नहीं जाता) मौत आ रही है, हँसते-हँसते बड़े चाव और खुशी से उसे जोर से गले लगा लूँगा। जेल के कानून अनुसार और कुछ नहीं लिख सकता। आपको नमस्कार, देश के दर्दमन्दों को नमस्कार, वन्देमातरम!

आपका,
राजिन्द्रनाथ लाहिड़ी

फिर इस पत्र के बाद फाँसी नहीं हो सकी, क्योंकि प्रिवी कौंसिल में अपील की गयी थी। दूसरा पत्र आपने 14 दिसम्बर को एक मित्र के नाम लिखा था –

कल मुझे पता चला है कि प्रिवी कौंसिल ने मेरी अपील खारिज कर दी है। आप लोगों ने हमें बचाने की बहुत कोशिश की, लेकिन लगता है कि देश की बलि-वेदी पर हमारे प्राणों के बलिदान की ही जरूरत है। मौत क्या है? जीवन की दूसरी दिशा के सिवाय कुछ नहीं। जीवन क्या है? मौत की ही दूसरी दिशा का नाम है। फिर डरने की क्या जरूरत है? यह तो प्राकृतिक बात है, उतनी ही प्राकृतिक जितना कि प्रातः में सूर्योदय। यदि हमारी यह बात सच है कि इतिहास पलटा खाता है तो मैं समझता हूँ कि हमारा बलिदान व्यर्थ नहीं जायेगा।

मेरा नमस्कार सबको – अन्तिम नमस्कार!

आपका

राजिन्द्रनाथ लाहिड़ी

कितना भोला, कितना सुन्दर और निर्भीकतापूर्ण पत्र है। इनका लेखन कितना भोला है! फिर इन्हें ही अन्यों से दो दिन पहले ही फाँसी दे दी गयी। फाँसी के समय आपको हथकड़ी पहनाने का इन्तजाम किया जाने लगा तो आपने कहा कि क्या जरूरत है। आप मुझे रास्ता बताते जाओ, मैं स्वयं ही उधर चल पड़ता हूँ। अर्थी का जुलूस निकाला गया और बड़े जोश से अन्तिम संस्कार किया गया। वहीं यादगार बनाने की सलाह की जा रही है।

श्री रोशन सिंह जी

आपको 19 दिसम्बर को इलाहाबाद में फाँसी दी गयी। उनका एक आखिरी पत्र 13 दिसम्बर का लिखा हुआ है। आप लिखते हैं –

इस हफ्ते फाँसी हो जायेगी। ईश्वर के आगे विनती है कि आपके प्रेम का आपको फल दे। आप मेरे लिए कोई गम न करना। मेरी मौत तो खुशी वाली है। चाहिए तो यह कि कोई बदफैली करके बदनाम होकर न मरे और अन्त समय ईश्वर याद रहे। सो यही दो बातें हैं। इसलिए कोई गम नहीं करना चाहिए। दो साल बाल-बच्चों से अलग रहा हूँ। ईश्वर-भजन का खूब अवसर मिला। इसलिए मोह-माया सब टूट गयी। अब कोई चाह बाकी न रही। मुझे विश्वास है कि जीवन की दुख भरी यात्रा खत्म करके सुख के स्थान पर जा रहा हूँ। शास्त्रों में लिखा है, युद्ध में मरने वालों की ऋषियों जैसी रहत (श्रेणी) होती है। (आगे अस्पष्ट है)

'जिन्दगी जिन्दादिली को जानिये रोशन!' वरना कितने मरे और पैदा होते जाते हैं। आखिरी नमस्कार!

श्री रोशन सिंह रायबरेली के काम करने वालों में थे। किसान आन्दोलन में जेल जा चुके थे। सबको विश्वास था कि हाईकोर्ट से आपकी मौत की सजा टूट जायेगी क्योंकि आपके खिलाफ कुछ भी नहीं था। लेकिन फिर भी वे अंग्रेजशाही का शिकार हो ही गये और फाँसी पर लटका दिये गये। तख्ते पर खड़े होने के बाद आपके मुँह से जो आवाज निकली, वह यह थी –

'वन्देमातरम!'

आपकी अर्थी के जुलूस की इजाजत नहीं दी गयी। लाश की फोटो लेकर दोपहर में आपका दाह-संस्कार कर दिया गया।

श्री अशफ़ाक़ उल्ला

यह मस्ताना शायर भी हैरान करने वाली खुशी से फाँसी चढ़ा। बड़ा सुन्दर और लम्बा-चौड़ा जवान था, तगड़ा बहुत था। जेल में कुछ कमजोर हो गया था। आपने मुलाकात के समय बताया कि कमजोर होने का कारण गम नहीं, बल्कि खुदा की याद में मस्त रहने की खातिर रोटी बहुत कम खाना है। फाँसी से एक दिन पहले आपकी मुलाकात हुई। आप खूब सजे-सँवरे थे। बड़े-बड़े कढ़े हुए केश खूब सजते थे। बड़ा हँस-हँसकर बातें करते रहे। आपने कहा, कल मेरी शादी होने वाली है। दूसरे दिन सुबह छह बजे आपको फाँसी दी गयी। कुरान शरीफ का बस्ता लटकाकर हाजियों की तरह वजीफा पढ़ते हुए बड़े हौसले से चल पड़े। आगे जाकर तख्ते पर रस्सी को चूम लिया। वहीं आपने कहा –

''मैंने कभी किसी आदमी के खून से अपने हाथ नहीं रँगे और मेरा इन्साफ खुदा के सामने होगा। मेरे ऊपर लगाये सभी इल्जाम गलत हैं।'' खुदा का नाम लेते ही रस्सी खींची गयी और वे कूच कर गये। उनके रिश्तेदारों ने बड़ी मिन्नतों-खुशामदों से उनकी लाश ली और उन्हें शाहजहाँपुर ले आये। लखनऊ स्टेशन पर मालगाड़ी के एक डिब्बे में उनकी लाश देखने का अवसर कुछ लोगों को मिला। फाँसी के दस घण्टे बाद भी चेहरे पर वैसी ही रौनक थी। ऐसा लगता था कि अभी ही सोये हों। लेकिन अशफ़ाक़ तो ऐसी नींद सो गये थे कि जहाँ से वे कभी नहीं जागेंगे। अशफ़ाक़ शायर थे और उनका शायर उपनाम हसरत था। मरने से पहले आपने ये दो शेर कहे थे –

'फनाह हैं हम सबके लिए, हम पै कुछ नहीं मौकूफ[1]!
वका[2] है एक फकत जाने की ब्रिया[3] के लिए।'

(नाश तो सभी होंगे, कोई हम अकेले थोड़े होंगे। न मरने वाला तो सिर्फ एक परमात्मा है।)

और –

'तंग आकर हम उनके जुल्म से बेदाद[4] से,
चल दिये सूए-अदम[5] जिन्दाने[6] फैजाबाद से।'

श्री अशफ़ाक़ की ओर से एक माफीनामा छपा था, उसके सम्बन्ध में श्री रामप्रसाद जी ने अपने आखिरी एलान में पोजीशन साफ कर दी है। आपने कहा है कि अशफाक माफीनामा तो क्या, अपील के लिए भी राजी नहीं थे। आपने कहा था, मैं खुदा के सिवाय किसी के आगे झुकना नहीं चाहता। परन्तु रामप्रसाद के कहने-सुनने से आपने वही सबकुछ लिखा था। वरना मौत का उन्हें कोई डर या भय नहीं था। उपरोक्त हाल पढ़कर पाठक भी यह बात समझ सकते हैं। आप शाहजहाँपुर के रहने वाले थे और आप श्री रामप्रसाद के दायें हाथ थे,

---

1. रुका हुआ 2. युद्ध के समाचार 3. जोश 4. अत्याचार 5. अंत की ओर 6. जेल

मुसलमान होने के बावजूद आपका कट्टर आर्यसमाजी धर्म से हद दर्जे का प्रेम था। दोनों प्रेमी एक बड़े काम के लिए अपने प्राण उत्सर्ग कर अमर हो गये।

श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल'

श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल' बड़े होनहार नौजवान थे। गजब के शायर थे। देखने में भी बहुत सुन्दर थे। योग्य बहुत थे। जानने वाले कहते हैं कि यदि किसी और जगह या किसी और देश या किसी और समय पैदा हुए होते तो सेनाध्यक्ष बनते। आपको पूरे षड्यन्त्र का नेता माना गया है। चाहे बहुत ज्यादा पढ़े हुए नहीं थे, लेकिन फिर भी पण्डित जगतनारायण जैसे सरकारी वकील की सुध-बुध भुला देते थे। चीफ कोर्ट में अपनी अपील खुद ही लिखी थी, जिससे कि जजों को कहना पड़ा कि इसे लिखने में जरूर ही किसी बहुत बुद्धिमान व योग्य व्यक्ति का हाथ है।

19 तारीख की शाम को आपको फाँसी दी गयी। 12 की शाम को जब आपको दूध दिया गया तो आपने यह कहकर इन्कार कर दिया कि अब मैं माँ का दूध ही पिऊँगा। 18 को आपकी मुलाकात हुई। माँ को मिलते समय आपकी आँखों से अश्रु बह चले। माँ बहुत हिम्मत वाली देवी थी। आपसे कहने लगी – हरीशचन्द्र, दधीचि आदि बुजुर्गों की तरह वीरता, धर्म व देश के लिए जान दे, चिन्ता करने और पछताने की जरूरत नहीं। आप हँस पड़े। कहा, 'माँ! मुझे क्या चिन्ता और क्या पछतावा, मैंने कोई पाप नहीं किया। मैं मौत से नहीं डरता। लेकिन माँ! आग के पास रखा घी पिघल ही जाता है। तेरा-मेरा सम्बन्ध ही कुछ ऐसा है कि पास होते ही आँखों से अश्रु उमड़ पड़े। नहीं तो मैं बहुत खुश हूँ। फाँसी पर ले जाते समय आपने बड़े जोर से कहा, 'वन्देमातरम', 'भारतमाता की जय' और शान्ति से चलते हुए कहा –

'मालिक तेरी रजा रहे और तू ही तू रहे
बाकी न मैं रहूँ, न मेरी आरजू रहे।
जब तक कि तन में जान रगों में लहू रहे,
तेरा ही जिक्रेयार, तेरी जुस्तजू[1] रहे।'

फाँसी के तख्ते पर खड़े होकर आपने कहा –
I wish the downfall of the British Empire-
(मैं ब्रिटिश साम्राज्य का पतन चाहता हूँ।)
फिर यह शेर पढ़ा –

'अब न अहले वलवले हैं

---

1. इच्छा

और न अरमानों की भीड़!
एक मिट जाने की हसरत,
अब दिले-बिस्मिल में है!

फिर ईश्वर के आगे प्रार्थना की और फिर एक मन्त्र पढ़ना शुरू किया। रस्सी खींची गयी। रामप्रसाद जी फाँसी पर लटक गये। आज वह वीर इस संसार में नहीं है। उसे अंग्रेजी सरकार ने अपना खौफनाक दुश्मन समझा। आम खयाल यह है कि उसका कसूर यही था कि वह इस गुलाम देश में जन्म लेकर भी एक बड़ा भारी बोझ बन गया था और लड़ाई की विद्या से खूब परिचित था। आपको मैनपुरी षड्यन्त्र के नेता श्री गेंदालाल दीक्षित जैसे शूरवीर ने विशेष तौर पर शिक्षा देकर तैयार किया था। मैनपुरी के मुकदमे के समय आप भागकर नेपाल चले गये थे। अब वही शिक्षा आपकी मृत्यु का एक बड़ा कारण हो गया। 7 बजे आपकी लाश मिली और बड़ा भारी जुलूस निकला। स्वदेशप्रेम में आपकी माता ने कहा-

''मैं अपने पुत्र की इस मृत्यु पर प्रसन्न हूँ, दुखी नहीं। मैं श्री रामचन्द्र जैसा ही पुत्र चाहती थी। बोलो श्री रामचन्द्र की जय!''

इत्र-फुलेल और फूलों की वर्षा के बीच उनकी लाश का जुलूस जा रहा था। दुकानदारों ने उनके ऊपर से पैसे फेंके। 11 बजे आपकी लाश शमशान भूमि में पहुँची और अन्तिम-क्रिया समाप्त हुई।

आपके पत्र का आखिरी हिस्सा आपकी सेवा में प्रस्तुत है -

''मैं खूब सुखी हूँ। 19 तारीख को प्रातः जो होना है उसके लिए तैयार हूँ। परमात्मा काफी शक्ति देंगे। मेरा विश्वास है कि मैं लोगों की सेवा के लिए फिर जल्द ही जन्म लूँगा। सभी से मेरा नमस्कार कहें। दया कर इतना काम और भी करना कि मेरी ओर से पण्डित जगतनारायण (सरकारी वकील जिसने इन्हें फाँसी लगवाने के लिए बहुत जोर लगाया था) को अन्तिम नमस्कार कह देना। उन्हें हमारे खून से लथपथ रुपयों से चैन की नींद आये। बुढ़ापे में ईश्वर उन्हें सद्‌बुद्धि दे।''

रामप्रसाद जी की सारी हसरतें दिल ही दिल में रह गयीं। आपने एक लम्बा-चौड़ा एलान किया है, जिसे संक्षेप में हम दूसरी जगह दे रहे हैं। फाँसी से दो दिन पहले सी.आई.डी. के मि. हैमिल्टन आप लोगों की मिन्नतें करते रहे कि आप मौखिक रूप से सब बातें बता दो, आपको पाँच हजार रुपया नकद दे दिया जायेगा और सरकारी खर्चे पर विलायत भेजकर बैरिस्टर की पढ़ाई करवायी जायेगी। लेकिन आप कब इन बातों की परवाह करते थे। आप हुकूमतों को ठुकराने वाले व कभी-कभार जन्म लेने वाले वीरों में से थे। मुकदमे के दिनों आपसे जज ने पूछा था, ''आपके पास क्या डिग्री है?'' तो आपने हँसकर जवाब दिया था, ''सम्राट बनाने वालों को डिग्री की कोई जरूरत नहीं होती, क्लाइव के पास भी कोई डिग्री नहीं थी।'' आज वह वीर हमारे बीच नहीं है। आह!!

काकोरी के शहीदों के लिए प्रेम के आँसू

(जनवरी, 1928 के 'किरती' ने काकोरी के शहीदों सम्बन्धी एक सम्पादकीय नोट भी प्रकाशित किया। यह भगत सिंह का लिखा हुआ तो नहीं है, लेकिन उनके साथी भगवतीचरण वोहरा का हो सकता है। निश्चय ही, यह भी ऐतिहासिक दस्तावेज है, जिसे नीचे दिया जा रहा है। – स.)

काकोरी केस के चार वीरों को फाँसी पर लटका दिया गया। वे लाड़-प्यार से पले शूरवीर हँसते-हँसते शहादत प्राप्त कर गये। भारतमाता के चार सुपुत्र अपने शीश देश और राष्ट्र के नाम अर्पण कर गये। उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा, अपना फर्ज पूरा कर दिया। वे इस पंच भौतिक शरीर की कैद से आजाद हो गये और हम गुलामों को अपनी गुलामी के दुखड़े रोने के लिए पीछे छोड़ गये!!!

जिस देश में देशभक्ति गुनाह समझा जाता हो, जिस देश में आजादी की ख्वाहिश रखना बगावत समझा जाता हो, जहाँ लोक कल्याण की सजा मौत हो, जहाँ देशभक्तों की गरदन में फाँसी का रस्सा डाला जाता हो, उस देश की हालत खयाल में तो भले ही आ जाये, लेकिन बयान नहीं की जा सकती। किसी देश की अधोगति इससे ज्यादा क्या हो सकती है। लेकिन जिस देश में यह अन्याय नित्य प्रति होते हों, जहाँ ऐसे अत्याचार दिन-प्रतिदिन ही होते रहें यदि वहाँ के निवासी ऐसे-ऐसे अन्यायों, ऐसे अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठानी तो दूर, आह तक न भर सकते हों तो उस देश के निवासियों की हालत कैसी होगी?

हिन्दुस्तान गुलाम है। इसकी बागडोर विदेशियों के हाथ है। इससे प्रेम करना मौत को पुकारना है। इसकी आजादी के सपने देखना घर-बार, बाल-बच्चे छोड़कर जलावतनी की जिन्दगी गुजारना है। इस महीवाल के प्रेम ने कई सोहनियों को गहरे समुद्रों में डुबोया। इसके प्रेम ने कई प्रेमियों के दल के दल खत्म किये। इसका प्रेम अगाध है, अथाह है। इसके प्रेमी बेअन्त हैं, असंख्य हैं। न इस प्रेम का स्वर पता चलता है, न इसके प्रेमियों को ताव आती है। यहाँ तो 'चुप भाई चुप' वाली बात है।

यह जुल्म कब तक रहेगा? इस अन्याय का भाण्डा कब फूटेगा? बेगुनाहों को कब तक शहीद किया जायेगा? देश प्रेमियों को कब तक गोली का निशाना बनाया जायेगा? कब तक इस गुलामी डायन का और मुँह देखना पड़ेगा? आजादी देवी के दर्शन कब तक होंगे? अभी कितनी शहीदियाँ प्राप्त करनी होंगी। अभी और कितनों को फाँसी पर चढ़ाया जायेगा?

रब्बा! वह दिन कब आयेगा, जब ये शहीदियाँ रंग लायेंगी। ईश्वर, वह दिन कब देखेंगे जब हमारा बगीचा हरा-भरा होगा? यहाँ से पतझड़ का कूच कब होगा? उल्लू कब तक इस बाग में डेरा जमाये बैठे रहेंगे? बुलबुलें किस दिन फिर यहाँ चहचहायेंगी? ये पिंजरे कब टूटेंगे? आजादी कब लौटेगी, उजड़े कब फिर बसेंगे?

लोगो! भारतमाता के चार सुन्दर जवान फाँसी चढ़ा दिये गये। वे नौकरशाही के डसे, दुश्मनी का शिकार हो गये। कौन बता सकता है कि यदि वे जीवित रहते तो क्या-क्या नेकी के काम करते, कौन-कौन से परोपकार करते? कौन कह सकता है कि उनके रहने से संसार पहले से सुन्दर और रहने योग्य न दिखायी देता? वे वीर थे, आजादी के आशिक थे। उन्होंने देश और कौम की खातिर अपनी जान लुटा दी। वे अपनी माँओं की कोख को सफल बना गये।

यदि भारतमाता आजाद होती तो इनके बलिदानों का मोल पड़ता। यदि आज हिन्दुस्तान में कुछ जान होती तो ये बलिदान बेकार न होते। हाय! आजादी के वीर चले गये। उन्हें किसी ने न पहचाना, उन्हें किसी ने न कहा, आप शूरवीर हो, आप बहादुर हो। वह जगह धन्य है, जहाँ आप जन्मे-पले! जहाँ आप खेले। वे राहें धन्य हैं, जहाँ आप चले, जहाँ आप कूदे-भागे। वीर, मातृभूमि के लाड़ले वीर चले गये! वे अपना जन्म सफल कर गये!

बातें करनी आसान हैं, बड़कें मारनी आसान हैं। चगल-चगल करना और बात है, कुर्बानी देना और बात है। परीक्षा अलूणी चट्टान है, इसे चाटना आसान नहीं है। परीक्षा से बड़े-बड़े तौबा कर उठे थे। परीक्षा के आगे कोई जिगर वाला ही टिक सकता है। इन वीरों ने किस हिम्मत, किस बहादुरी से परीक्षा दी है। इनकी बहादुरी कभी भूल सकती है? धन्य हैं इनके माँ-बाप, जिन्होंने उन्हें जन्म दिया। धन्य हैं ये स्वयं, जो बलिदान के पुंज, आत्मत्याग की मिसाल हैं।

जब कभी आजादी का इतिहास लिखा जायेगा, जब कभी शहीदों का जिक्र होगा, जब कभी भारतमाता के लिए बलिदान करने वालों की चर्चा होगी तो वही 1. राजिन्द्रनाथ लाहिड़ी 2. रामप्रसाद बिस्मिल, 3. रोशन सिंह और 4. अशफ़ाक़ उल्ला का नाम जरूर लिया जायेगा। उस समय आने वाली पीढ़ियाँ इन शहीदों के आगे शीश झुकायेंगी और इन वीरों के बहादुरी भरे किस्से सुन-सुन सिर हिलायेंगी। उस समय ये कौम का आदर्श माने जायेंगे, इन बुजुर्गों की पूजा होगी।

आज हम कमजोर हैं, निःशक्त हैं। आज हम गिरे हुए हैं, झूठे हैं। आज हम अपनी दिली भावनाएँ नहीं बता सकते - क्योंकि हम कायर हैं, डरपोक हैं, आज हमें सच कहने से डर लगता है, क्योंकि कानून की तलवार हमारे सिरों पर लटकती दिखायी देती है। इससे यह नहीं कह सकते, 'काकोरी के शहीदो! आपने जो किया, भारतमाता के बन्धन तोड़ने के लिए किया। आपने जो कष्ट उठाये, वह हिन्दुस्तान को आजाद करवाने के लिए उठाये।' आज हम यह नहीं कह सकते कि 'आपने अपने मतानुसार अच्छा किया।'

गुलामों की अवस्था कितनी गिर जाती है। गुलामों में कितनी गिरावट आ जाती है। दैवी गुण उनमें से किस तरह भाग जाते हैं। वे कितने ढोंगी और पाखण्डी बन जाते हैं। वे कितने बुजदिल व कायर बन जाते हैं। वे सच्ची-खरी बातें मुँह पर नहीं कह सकते। वे दिल में कुछ और रखते हैं और बाहर कुछ और। उनकी हालत कितनी दयनीय हो जाती है!

इस हालत को सुधारने का एक ही साधन है, इस दुर्दशा को बदलने का एकमात्र इलाज है, इस दुर्दशा की एक ही दवा है, और वह है आजादी। आजादी कुर्बानियों के बगैर नहीं मिल सकती। शहीदों की इज्जत करने से, शहीदों के कारनामे याद करने से कुर्बानी का चाव उमड़ता है। जो कौम शहीदों को शहीद नहीं कह सकती, उसे क्या खाक आजाद होना है?

लोगो! देखे हैं आशिक सूली पर चढ़ते? वे मौत से मजाक करते थे। वे मौत पर हँसते थे, उन्हें मृत्यु का भय नहीं था। वे यार की गली में शीश तली पर रखकर आये थे। उन्हें डर क्या था, वे तो आये ही मरने थे। मृत्यु का तो वे पहले ही वरण कर चुके थे, जीवन की आशा तो वे पहले ही छोड़ चुके थे। वे तो गाते थे -

एक मिट जाने की हसरत अब दिले-बिस्मिल में है।

कहाँ वे और कहाँ हम? वे तो किसी और ही देश के निवासी थे। वे तो गरीबों की आह सुनकर मैदान में उतरे थे। वे तो हिन्दुस्तान से भूख-नंग को दूर करने आये थे। वे तो मजदूरों और किसानों का हाल पूछने आये थे। वे तो किसी ऊँचे आदर्श के पुजारी थे। वे तो किसी ऊँचे स्वप्न की उड़ान में मस्त थे। वे तो वे नजारे देखते थे, जहाँ न भूख है, न नग्नता। जहाँ न गरीबी है, न अमीरी। जहाँ न जुल्म है, न अन्याय। बस जहाँ प्रेम है, एकता है, जहाँ इन्साफ है, आजादी है, जहाँ सुन्दरता है। पर हम? हम?-हाय रे!

किसी का आदर्श कमाना, आप खाना और बच्चों को पालना होता है। किसी का आदर्श स्वयं को ऊँचा उठाने का होता है। किसी का आदर्श गरीबों, दुखियों को लूटकर धन-दौलत इकट्ठा करना होता है, किसी का आदर्श अपने सुन्दर शरीर को तकलीफ से दूर करने का होता है।

किसी का आदर्श कुछ होता है, किसी का कुछ। लेकिन उनका आदर्श देश था। उनका आदर्श हिन्दुस्तान की आजादी था। उनका कोई स्वार्थ नहीं था। उनके खाने के लिए, उन्हें ओढ़ने के लिए किसी बात की कमी न थी। वे तो जो कुछ करते थे, लोक-कल्याण की खातिर, लोक-सेवा के लिए करते थे। वे इतने बलिदान के पुंज निकले, कि स्वयं को हमारे ऊपर वार दिया। आइये, इन वीरों को प्रणाम करें।

मातृभूमि के लाड़लो! क्या हुआ यदि डर के मारे आज हम आपका नाम भी लिखने से घबराते हैं? क्या हुआ जो आज हम दिल की बातें कहने में झिझकते हैं? क्या हुआ यदि आज हिन्दुस्तान में मुर्दानोशी छायी है और आपका नाम लेने से ही षड्यन्त्रकारी बन जाते हैं? क्या हुआ यदि कोई हिन्दुस्तानी आपको भला-बुरा भी कहे, लेकिन समय आयेगा जब आपकी

कद्र होगी, जब आपको शहीद कहा जायेगा, जिस तरह 1857 के गदर को अब 'आजादी की जंग' कहा जाता है। समय सिद्ध कर देता है, समय सच्ची-सच्ची कहलवा देता है, समय किसी का लिहाज नहीं करता। उस समय आप अपनी असली शान से चमकेंगे और उस समय हिन्दुस्तान आप पर बलिहारी जायेगा।

शहीद वीरो! हम कृतघ्न हैं, हम तुम्हारे किये को नहीं जानते। हम कायर हैं, हम सच-सच नहीं कह सकते। हमें आप माफ करो, हमें आप क्षमादान दो। हमें मौत से भय लगता है, हमारा दिमाग सूली का नाम सुनते ही चक्कर खा जाता है। आप धन्य थे। आपके बड़े जिगर थे कि आपने फाँसी को टिच्च समझा। आपने मौत के समय मजाक किये! पर हम? हमें चमड़ी प्यारी है, हमें तो जरा-सी तकलीफ ही मौत बनकर दिखने लगती है। आजादी! आजादी का तो नाम सुनते ही हमें कँपकँपी छिड़ जाती है। हाँ! गुलामी के साथ हमें प्यार है, गुलामी की ठोकरों से हमें मजा आता है! आपकी नस-नस से, रग-रग से आजादी की पुकार गूँजती थी लेकिन हमारी रग-रग से, हमारी नस-नस से, गुलामी की आवाज निकलती है। आपका और हमारा क्या मेल? हमें आप क्षमा करो, आप हमारे केवल यह प्रेम के अश्रु ही स्वीकार करो।

कहो, धन्य हैं, काकोरी के शहीद!

शहीद अशफ़ाक़ उल्ला का फाँसीघर से सन्देश

(यह सन्देश 16 दिसम्बर, 1927 को फैजाबाद जेल से देशवासियों के लिए भेजा गया। – स.)

भारतमाता के रंगमंच पर हम अपनी भूमिका अदा कर चुके हैं। गलत किया या सही, जो भी हमने किया, स्वतन्त्रता-प्राप्ति की भावना से प्रेरित होकर किया। हमारे अपने (अर्थात कांग्रेसी नेता) हमारी निन्दा करें या प्रशंसा, लेकिन हमारे दुश्मनों तक को हमारी हिम्मत और वीरता की प्रशंसा करनी पड़ी है। लोग कहते हैं हमने देश में आतंकवाद (Terrorism) फैलाना चाहा है, यह गलत है। इतनी देर तक मुकदमा चलता रहा। हमारे में से बहुत-से लोग बहुत दिनों तक आजाद रहे और अब भी कुछ लोग आजाद हैं (संकेत चन्द्रशेखर आजाद की ओर है। – स.) फिर भी हमने या हमारे किसी साथी ने हमें नुकसान पहुँचाने वालों तक पर गोली नहीं चलायी। हमारा उद्देश्य यह नहीं था। हम तो आजादी हासिल करने के लिए देशभर में क्रान्ति लाना चाहते थे।

जजों ने हमें निर्दयी, बर्बर, मानव-कलंकी आदि विशेषणों से याद किया है। हमारे शासकों की कौम के जनरल डायर ने निहत्थों पर गोलियाँ चलायी थीं और चलायी थीं बच्चों, बूढ़ों, व स्त्री-पुरुषों पर। इन्साफ के इन ठेकेदारों ने अपने इन भाई-बन्धुओं को किस विशेषण से सम्बोधित किया था? फिर हमारे साथ ही यह सलूक क्यों?

हिन्दुस्तानी भाइयो! आप चाहे किसी भी धर्म या सम्प्रदाय को मानने वाले हों, देश के काम में साथ दो! व्यर्थ आपस में न लड़ो। रास्ता चाहे अलग हों, लेकिन उद्देश्य सबका एक है। सभी कार्य एक ही उद्देश्य की पूर्ति के साधन हैं, फिर यह व्यर्थ के लड़ाई-झगड़े क्यों? एक होकर देश की नौकरशाही का मुकाबला करो अपने देश को आजाद कराओ। देश के सात करोड़ मुसलमानों में मैं पहला मुसलमान[1] हूँ, जो देश की आजादी के लिए फाँसी चढ़ रहा हूँ, यह सोचकर मुझे गर्व महसूस होता है।

अन्त में सभी को मेरा सलाम!

हिन्दुस्तान आजाद हो!
मेरे भाई खुश रहें!

आपका भाई
अशफाक

[1] ऐतिहासिक तथ्य है कि एक सौ के करीब मुसलमान गदर पार्टी आन्दोलन में शहीद हुए और हजारों 1857 के आन्दोलन में। लेकिन अशफ़ाक़ को कमजोर करने और धोखा देने के लिए पुलिस ने एक बार उनसे कहा था कि शहीद होने वाले तुम एकमात्र मुसलमान हो, शायद इसीलिए उन्होंने यह लिखा है। – स.

अशफ़ाक़ उल्ला खां

''तेरा जीना तेरे मरने की बदौलत होगा''

अशफ़ाक़ उल्ला खां का जन्म 22 अक्टूबर 1900 को उत्तरप्रदेश के शाहजहांपुर शहर में कदनरवैल जलालनगर मुहल्ले में हुआ था। उनके पिता का नाम मोहम्मद शफीक उल्ला खां व मां का नाम मजहूरून्निशां बेगम था। अशफाक उल्ला खां का परिवार एक सम्पन्न परिवार था। उनके ननिहाल के लोग उस जमाने में उच्च शिक्षा पाये व ब्रिटिश सरकार में डिप्टी कलेक्टर, जुडीशियल मजिस्ट्रेट जैसे पदों पर थे। हालांकि अशफाक के पिता का परिवार ननिहाल के परिवार की तरह उच्च शिक्षा नहीं पाया हुआ था। वे अपने छः भाई-बहनों में सबसे छोटे थे। 'अच्छू' नाम से घर वाले उन्हें बुलाते थे।

अशफ़ाक़ की पढ़ाई-लिखाई शाहजहांपुर शहर में ही हुई थी। उनके बड़े भाई प. रामप्रसाद बिस्मिल के सहपाठी थे। रामप्रसाद बिस्मिल के सम्पर्क में वे कैसे आये इसकी चर्चा अपनी आत्मकथा में बिस्मिल ने की है।

शाहजहांपुर शहर को क्रांतिकारियों का गढ़ कहा जाता था। वजह यह थी कि 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के समय यहां से अंग्रेजों को खदेड़ दिया गया था। 31 मई 1857 को यहां आजाद रूहेला राज की घोषणा हुयी थी। इस लड़ाई के एक नायक अहमद उल्लाह शाह थे जिनका सर अंग्रेजों ने काटकर शहर के बीचों-बीच चौराहे पर लटका दिया था ताकि फिर कोई बगावत की हिम्मत न कर सके। 1857 के क्रांतिकारियों ने इसका माकूल जवाब दिया। बगावत बढ़ती गयी और जब अंग्रेज एक गद्दार नवाब की कोठी में जाकर छुप गये तो लोगों ने उस कोठी पर आग लगा दी। यह जगह आज भी शाहजहांपुर में ''जली कोठी'' के नाम से जानी जाती है। जिस शहर का ऐसा इतिहास रहा हो वहां से अशफाक, बिस्मिल तो तैयार होने ही थे।

अशफ़ाक़ जैसे नौजवान गांधी जी द्वारा 1922 में चौरी-चौरा की घटना के बाद असहयोग आन्दोलन के वापस लेने के कारण बेहद क्षुब्ध थे। वे एक नये रास्ते की तलाश में

थे। शिव वर्मा के अनुसार 1923 में शचीन्द्र नाथ सान्याल की पहल पर 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एशोसिएशन' की स्थापना हुई। रामप्रसाद बिस्मिल, अशफ़ाक़ उल्ला खां इसके शुरुआती सदस्यों में थे।

भारत की आजादी की लड़ाई को सशस्त्र तरीके से लड़ने की इन्होंने उस वक्त वकालत की। क्रांतिकारी संगठन व कार्यों की जरूरत के लिए इन्होंने पहले गद्दार धनी-मानी लोगों को लूटा और फिर मशहूर काकोरी काण्ड में ब्रिटिश सरकार के खजाने को लूट लिया था। इस लूट ने धूर्त ब्रिटिश सरकार के होश फाख्ता कर दिये। पहले बिस्मिल और फिर अन्य क्रांतिकारी जाल बिछाकर पकड़े गये। अशफ़ाक़ सबसे अंत में अपने एक दोस्त की गद्दारी के कारण पकड़े गये। 19 दिसम्बर 1927 को उन्हें फांसी पर लटका दिया गया।

अशफ़ाक़ ने महज 27 साल का छोटा सा जीवन जिया परन्तु बहुत खूब जिया। वे अच्छे शायर भी थे। 'हसरत' व 'वारसी' उपनाम से उन्होंने आजादी और इंकलाब की अलख जगाने का काम भी काफी अच्छे ढंग से किया है।

‘‘मियां! मान जाओ; फायदे में रहोगे।’’

अशफ़ाक़ उल्ला खां किस मिट्‌टी के बने थे, इसे दो घटनाएं साबित करती हैं। पहली घटना यह है कि जब उन्हें काकोरी लूट के मामले में गिरफ्तार कर लिया गया तो मुकदमे के मजिस्ट्रेट ऐनुद्‌दीन ने अशफ़ाक़ को बरगलाने के लिए हिन्दू–मुस्लिम के नाम पर यह सलाह दी कि वह किसी मुस्लिम वकील को अपना वकील बनायें। अशफाक उल्ला खां ने इस सलाह को तुरन्त ठुकरा दिया। एक हिन्दू वकील कृपाशंकर हजेला को अपना वकील नियुक्त किया।

दूसरी घटना यह है कि सी.आई.डी. के पुलिस कप्तान खान बहादुर तसद्‌दुक हुसैन ने उन्हें सरकारी गवाह बनने के ऐवज में फांसी की सजा से बचाने की बात कही। पुलिस कप्तान हुसैन ने अपने मुस्लिम होने का हवाला दिया और अशफ़ाक़ को रामप्रसाद बिस्मिल और अन्य क्रांतिकारियों के खिलाफ भड़काने की कोशिश की। अशफ़ाक़ उल्ला खां ने पुलिस कप्तान की ऐसी लानत–मलामत की वह तुरन्त वहां से नौ दो ग्यारह हो गया।

हुसैन ने अशफ़ाक़ से कहा, ‘‘देखो अशफ़ाक़ भाई! तुम भी मुस्लिम हो और अल्लाह के फजल से मैं भी एक मुस्लिम हूं इस वास्ते तुम्हें आगाह कर रहा हूं। ये रामप्रसाद बिस्मिल वगैरा सारे लोग हिन्दू हैं। ये यहां हिन्दू सल्तनत कायम करना चाहते हैं। तुम कहां इन काफिरों के चक्कर में अपनी जिन्दगी जाया करने की जिद पर तुले हुए हो। मैं तुम्हें आखिरी बार समझाता हूं, मियां! मान जाओ; फायदे में रहोगे।’’

अशफ़ाक़ का जवाब ऐसा गुस्से से भरा था कि पुलिस कप्तान की घिग्गी बंध गयी,

‘‘खबरदार! जुबान सम्हाल कर बात कीजिये। पण्डित जी (रामप्रसाद बिस्मिल) को आपसे ज्यादा मैं जानता हूं। उनका मकसद यह बिल्कुल नहीं है। और अगर हो भी तो हिन्दू राज्य तुम्हारे इस अंग्रेजी राज्य से बेहतर ही होगा। आपने उन्हें काफिर कहा इसके लिए मैं आपसे यही दरख्वास्त करुंगा कि मेहरबानी करके आप इसी वक्त तशरीफ ले जायें वरना मेरे ऊपर दफा 302 (कत्ल) का एक और केस कायम हो जायेगा।’’

कप्तान साहब चुपचाप वहां से खिसक लिये।

“मैं कट्टर मुसलमान हूं परन्तु इस मंदिर की एक-एक ईंट मुझे प्राणों से प्यारी है।”

अशफ़ाक़ उल्ला खां के लिए मंदिर और मस्जिद एक समान थे। एक बार जब शाहजहांपुर में हिन्दू और मुस्लिमों में झगड़ा हुआ और शहर में मारपीट शुरू हो गई, उस समय अशफ़ाक़; बिस्मिल जी के साथ; आर्य समाज मंदिर में बैठे हुए थे। कुछ मुस्लिम मन्दिर के पास आ गए और आक्रमण करने के लिए तैयार हो गए। अशफ़ाक़ उल्ला खां ने अपना पिस्तौल निकाल लिया और आर्य समाज मन्दिर से बाहर आकर मुस्लिमों से कहने लगे कि “मैं कट्टर मुसलमान हूं परन्तु इस मन्दिर की एक-एक ईंट मुझे प्राणों से प्यारी है। मेरे नजदीक मन्दिर और मस्जिद की प्रतिष्ठा बराबर है। अगर किसी ने इस मन्दिर की ओर निगाह उठाई तो गोली का निशाना बनेगा। अगर तुमको लड़ना है तो बाहर सड़क पर चले जाओ और खूब दिल खोल कर लड़ लो।” उनकी इस सिंह गर्जना को सुनकर सबके होश गुम हो गए और किसी का साहस नहीं हुआ, जो आर्य समाज मन्दिर पर आक्रमण करे। यह अशफाक का सार्वजनिक प्रेम था। इससे भी अधिक उनको रामप्रसाद बिस्मिल जी से प्रेम था।” (साभार : भारतकोश)

“तुम सच्चे मित्र बन गये”

“..तुम्हारी कोशिशों ने मेरे दिल में जगह पैदा कर दी।..थोड़े दिनों में तुम मेरे छोटे भाई के समान हो गये थे, किन्तु छोटे भाई बनकर तुम्हें संतोष न हुआ। तुम समानता का अधिकार चाहते थे। वही हुआ। तुम सच्चे मित्र बन गए। सबको आश्चर्य हुआ था कि एक कट्टर आर्य समाजी और मुसलमान का मेल कैसा। मैं मुसलमानों की शुद्धि करता था। आर्य समाज मंदिर में मेरा निवास था, किन्तु तुम इन बातों की किंचित मात्र चिंता न करते थे। मेरे कुछ साथी तुम्हें मुसलमान होने के कारण घृणा की दृष्टि से देखते थे, किन्तु तुम अपने निश्चय में दृढ़ थे। मेरे पास आर्य समाज मंदिर में आते-जाते थे। हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा होने पर तुम्हारे मुहल्ले के सब कोई तुम्हें खुल्लम-खुल्ला गालियां देते थे, काफिर के नाम से पुकारते थे, पर तुम कभी उनके विचारों से सहमत नहीं हुए। सदैव हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य के पक्षपाती रहे। तुम एक सच्चे मुसलमान और सच्चे स्वदेशभक्त थे।”..

“अंत में इस प्रेम, प्रीति तथा मित्रता का परिणाम क्या हुआ। मेरे विचारों के रंग में तुम भी रंग गए। तुम भी कट्टर क्रांतिकारी बन गए।..” (रामप्रसाद बिस्मिल की आत्मकथा में अशफ़ाक़ उल्ला खां के बारे में लिखे गये लेख का चुनिंदा हिस्सा)

अमर शहीद अशफ़ाक़ उल्ला खां

क्यों है उन्हें बार-बार याद करने की जरूरत

''बहुत ही जल्द टूटेंगी गुलामी की ये जंजीरें,
किसी दिन देखना आजाद ये हिन्दोस्तां होगा।
जिन्दगी बादे-फना तुझको मिलेगी हसरत
तेरा जीना तेरे मरने की बदौलत होगा।''

'हसरत' अमर शहीद अशफ़ाक़ उल्ला खां का उपनाम (तखल्लुस) था। वे 'वारसी' उपनाम से भी शायरी करते थे। अशफ़ाक़ उल्ला खां को 19 दिसम्बर 1927 को फांसी दे दी गयी थी। फांसी दिये जाने के कुछ समय पहले ही उन्होंने ये शब्द लिखे थे। ये शब्द उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व व दर्शन को एक साथ प्रस्तुत कर देते हैं।

''बहुत ही जल्द टूटेंगी गुलामी की ये जंजीरें'' की घोषणा एक शायर की सिर्फ भोली कल्पना नहीं थी बल्कि वे स्वप्नदृष्टा क्रांतिकारी की घोषणा थी। और वह दिन जिस दिन हिंदोस्तां आजाद होगा वह सिर्फ व सिर्फ कुर्बानी की बदौलत ही आ सकता है। इसलिए वह कहते हैं कि असली जिन्दगी तो देश के लिए मरने के बाद ही शुरू हो सकती है। इसमें किसी पारलौकिक दुनिया, स्वर्ग-जन्नत में जीने का मसला नहीं है बल्कि उनके शहीद होने के बाद जब देश आजादी की सांसें लेगा वह उनके लिए दूसरी जिन्दगी की तरह से होगा। अशफ़ाक़ की बात सही साबित हुयी। जल्द ही गुलामी की जंजीरें टूट गयी। देश आजाद हो गया।

अशफ़ाक़ उल्ला खां ऐसा नहीं है कि धर्म पर विश्वास नहीं करते थे। वे ''कट्टर मुसलमान'' थे। ऐसे कट्टर मुसलमान थे जो कह सकते थे कि 'इस मंदिर की एक-एक ईंट मुझे प्राणों से प्यारी है।' वे ऐसे ''कट्टर मुसलमान'' थे जब पुलिस कप्तान ने मुस्लिम होने के नाते यह दुहाई दी कि वे क्रांतिकारियों का साथ छोड़ दें तो उन्होंने पुलिस कप्तान को इतनी बुरी तरह से लताड़ा कि उसने इसी में अपनी भलाई समझी कि वह वहां से तुरन्त नौ दो ग्यारह हो जाये।

धर्म उनके लिए निजी मामला था। वे सावरकर या जिन्ना जैसे नहीं थे जो निजी

जीवन में तो धर्म के कायदे-कानूनों का पालन नहीं करते थे (सावरकर को गाय का मांस व जिन्ना को सुअर का मांस खाने से परहेज नहीं था) परन्तु अपने घृणित राजनैतिक उद्देश्यों के लिए धर्म का इस्तेमाल करते थे। अशफाक उल्ला खां, रामप्रसाद बिस्मिल, भगत सिंह के दिखाये रास्ते पर यदि देश चलता तो कभी देश का बंटवारा न होता। न भारत, न पाकिस्तान, न बांग्लादेश बनते और न कभी दंगे-फसाद में लाखों लोग मारे जाते। न लाखों लोगों को अपना घरद्वार छोड़ना पड़ता। और न ऐसा कभी होता कि पाकिस्तान-बांग्लादेश में कठमुल्ले राज करते और न भारत में हिन्दू फासीवादी शासन में आते। पूरा भारतीय उपमहाद्वीप ब्रिटिश साम्राज्यवादियों, धार्मिक-साम्प्रदायिक उन्मादियों का शिकार हुआ। इन देशों में मजदूरों-किसानों-मेहनतकशों की सत्ता कायम होने के बजाय वहशी ऐसे धनपशुओं, भूस्वामियों की सरकारें बनी जिन्होंने इन देशों को धार्मिक कट्टरता व साम्प्रदायिक आग में झुलसाये रखा। इन देशों में साम्प्रदायिक-नस्लीय-जातीय हिंसा में आजादी के बाद से लाखों लोग मारे जा चुके हैं। इन दंगों की कीमत मजदूर-मेहनतकशों ने अपनी जानों से चुकायी है। फिरकापरस्ती, दंगा-फसाद आज तक नहीं रुका।

शहीद अशफ़ाक़ उल्ला खां कभी अपने को ''कट्टर मुस्लिम'' (एक विशेष सन्दर्भ में) ''कट्टर नास्तिक'' तो कभी अपने को कम्युनिस्ट तक कहते थे। यह उनके पारिवारिक परिवेश, समय और विचारयात्रा को दिखलाता है। वे एक ऐसे दौर की पैदायश थे जिसमें मजदूरों-किसानों के नेतृत्व में रूस में 1917 में 'महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति' सम्पन्न हुयी थी। जारशाही और पूंजीवाद का नाश कर मजदूरों-किसानों ने बोल्शेविकों के नेतृत्व में अपना राज कायम किया था। रूस की समाजवादी क्रांति ने पूरी दुनिया में शोषित-उत्पीड़ितों को सदियों की नींद से जगा दिया था। चीन, भारत, अफ्रीका, अरब सभी नई सुबह के लिए तरस रहे थे। वे सिर्फ तरस नहीं रहे थे बल्कि नई सुबह को हकीकत में बदलने के लिए इंकलाबी रास्ता पकड़ रहे थे। इसी का प्रभाव था कि हिन्दुस्तान रिपब्लिकन ऐशोसिएशन (एच आर ए) ने अपने नाम के साथ सोशलिस्ट (समाजवाद) शब्द जोड़ दिया था। अशफ़ाक़ उल्ला खां एच आर ए के संस्थापक सदस्य थे।

'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एशोसिएशन' का गठन 1923 में हुआ था और उसने 1928 में अपना नाम बदल कर 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एशोसिएशन' कर लिया था। जाहिर है ऐसा काकोरी केस के शहीदों की मृत्यु के बाद बिखरे संगठन को पुनर्संगठित करने के दौरान हुआ था। अशफ़ाक़, रामप्रसाद, राजेन्द्र लाहिड़ी आदि जिन्दा भी होते तो भी ऐसा ही होता। एक तो इसलिए कि उनके अधिकांश साथी बाद में बोल्शेविक क्रांति के समर्थक और समाजवाद को मानव मुक्ति का जरिया मानते थे। अशफाक उल्ला खां के विचारों का विस्तार व गहराई आगे चलकर शहीद-ए-आजम भगत सिंह के विचारों में स्पष्ट रूप से दिखती है। दूसरे इसलिए कि समाजवाद की सच्चाई देर-सबेर मजदूर-मेहनतकशों व क्रांतिकारियों के दिलो-दिमाग को रोशन करती ही करती।

अशफ़ाक़ उल्ला खां का जन्म 22 अक्टूबर 1900 को एक खाते-पीते जमींदार परिवार में हुआ था। उनके ननिहाल के लोग ब्रिटिश नौकरशाही में विभिन्न पदों पर थे। अपनी इसी धनी-मानी पृष्ठभूमि के कारण वे अपने साथियों के बीच संदेह की दृष्टि से देखे जाते थे। और उससे बढ़कर उनका मुस्लिम होना कईयों को नागवार गुजरता था। यहीं पर अशफाक उल्ला खां के व्यक्तित्व का महान पहलू सामने आता है। उन्होंने अपने ऐशोआराम से युक्त जीवन का भारत की आजादी और देश के गरीब लोगों के पक्ष में त्याग दिया था। उन्होंने अपने वर्ग का पक्ष छोड़कर जनता का पक्ष चुना। और इस सबकी कीमत उन्होंने अपने जीवन को न्यौछावर कर चुकायी थी। उन्होंने सच्चाई, न्याय का पक्ष चुना और इस पक्ष को चुनने के बाद जो भी कष्ट व खतरे उनके जीवन में आये वह सब बेहिचक होकर उठाये थे।

आज हमारे देश को ऐसे हजारों-हजार अशफाक, बिस्मिल, भगत सिंह चाहिये जो अपनी निजी ख्वाहिशों को किनारे रखकर देश के लिए, इंकलाब के लिए अपनी जान बाजी पर लगा सकें। अशफाक उल्ला खां के खूबसूरत व्यक्तित्व, अच्छी कद-काठी व उनके निश्छल व्यवहार के कारण उनके फरारी के जीवन में कई नवयुवतियां उन पर फिदा हुयीं। परन्तु उन्होंने अपने आपको इस सबसे दूर रखा। शहीद-ए-आजम भगत सिंह के जीवन के ऐसे पहलुओं की अक्सर चर्चा होती रहती है। शादी-ब्याह या प्रेम के मामले में इन नौजवान क्रांतिकारियों के विचारों की अतिरेकी कहकर कोई आलोचना कर सकता है परन्तु यह उनके आजादी के प्रति, क्रांति के प्रति अटूट निष्ठा और कुछ भी कर गुजरने की भावना को दिखलाता है। उनके क्रांतिकारी आदर्शवाद को दिखलाता है। जब अशफ़ाक़ उल्ला खां कहते हैं,

''कुछ आरजू नहीं है, है आरजू तो यह है

रख दे कोई जरा सी, खाके-वतन कफन में।''

तो यह उनके सर्वोच्च बलिदान की भावना को दिखलाता है। और उन्होंने साबित किया कि वक्त आने पर वह बिना किसी हिचकिचाहट के फांसी के फन्दे पर झूल सकते हैं।

इतिहास के पन्नों में यह बात मिलती है कि वे काकोरी में सरकारी खजाने की लूट के खिलाफ थे। उनका तर्क यह था कि अभी उनका संगठन उतना मजबूत नहीं, जितना होना चाहिये। परन्तु जब अल्पमत-बहुमत से यह फैसला हो गया तो उन्होंने संगठन के अनुशासन को माना और अपने जान की बाजी लगा दी। कोई भी क्रांतिकारी संगठन सख्त अनुशासन के बगैर जिन्दा नहीं रह सकता है। अशफाक उल्ला खां इस बात को अच्छी तरह जानते थे। वे क्रांतिकारी संगठन, अनुशासन के साथ नेतृत्व के महत्व को अच्छे ढंग से समझते थे। एच आर ए के नेता रामप्रसाद बिस्मिल के प्रति उनकी निष्ठा, स्नेह के अनेकानेक उदाहरण मिल जाते हैं। ऐसा नहीं है कि वह अपनी स्वतंत्र धारणा नहीं रखते थे। काकोरी मामले में वे इस लूट के विरुद्ध थे परन्तु एक बार फैसला हो जाने पर उन्होंने इस पूरी घटना के दौरान आगे बढ़कर भूमिका निभायी। इतिहास का सच यही है कि बिना क्रांतिकारी संगठन के क्रांति नहीं हो सकती

है। क्रांतिकारी संगठन अशफ़ाक़ उल्ला खां जैसे लोगों के बिना न तो बन सकते हैं और न चल सकते हैं।

जब काकोरी के क्रांतिकारियों पर लूट, आतंक आदि के बेजां आरोप लगाये गये तो उन्होंने न केवल अदालत में इसका जवाब दिया बल्कि उतने ही मारक ढंग से अपनी शायरी से भी इसका जवाब दिया।

''कहां गया कोहिनूर हीरा किधर गयी हाय मेरी दौलत,
वह सबका सब लूट करके उल्टा हमीं को डाकू बता रहे हैं।''

ब्रिटिश साम्राज्यवाद ने भारत की दौलत को दोनों हाथों से लूटा था। और यह लूट का सिलसिला दो शताब्दी तक चला। और जब-जब भारतीयों ने इस लूट का विरोध किया तो उन्होंने भारत की जमीन को खून से लाल कर दिया। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम (1857-1859) में हजारों लोग शहीद हुए। शहीद होने वालों में सभी मजहब के लोग थे। जलियांवाला बाग हत्याकाण्ड को कौन देशभक्त भारतीय भूल सकता है। इस हत्याकाण्ड के जरिये अंग्रेजों ने भारतीय आजादी की लड़ाई का दमन करने की कोशिश की परन्तु इसने हजारों नौजवानों को आजादी और क्रांति के संघर्ष के लिए प्रेरित कर दिया था। अशफ़ाक़ उल्ला खां, भगत सिंह, उधम सिंह आदि क्रांतिकारियों का जीवन और बलिदान इसकी गवाही देता है।

अशफ़ाक़ उल्ला खां के जीवन वृत्त में और यहां तक उनके खुद के एक बयान में इस तरह की बात आती है कि वे पहले मुसलमान थे जो कि देश की आजादी के लिए फांसी पर चढ़ रहे थे। एच आर ए के लिए तो यह बात ठीक हो सकती है परन्तु ऐतिहासिक सच्चाई व तथ्य यह है कि 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में हजारों मुसलमान शहीद हुये थे। और इसी तरह गदर लहर में भी सौ से अधिक मुसलमान शहीद हुये थे। और यह सिलसिला भारत की आजादी तक बदस्तूर जारी रहा।

वैसे भी भारत की आजादी की लड़ाई अथवा इंकलाब के लिए जो शहीद हुए उनकी धर्म, जाति, नस्ल, लिंग की पहचान गौण है। कौन व्यक्ति किस धर्म, किस जाति, किस नस्ल, किस लिंग में पैदा होगा यह उसके बस की बात नहीं है। जो उसके बस में है वह यह है कि वह कैसा जीवन जीता है। अपने युग की आवाज को कितना पहचानता है। और जीवन के एक-एक पल को किस तरह से उस काम के लिए लगाता है जिसकी आज सबसे ज्यादा जरूरत है। उस काम का नाम क्या है। उस काम का नाम इंकलाब है। इंकलाब के जरिये ही शोषित-उत्पीड़ितों की मुक्ति हो सकती है। इंकलाब के जरिये ही मानव मुक्ति हो सकती है।

अशफ़ाक़ उल्ला खां का पूरा जीवन इस बात की गवाही देता है कि उन्होंने अपने जमाने की आवाज को पहचाना। उसके हिसाब से अपना पूरा जीवन जिया और वक्त आने पर अपना सब कुछ भारत की आजादी की लड़ाई के लिए न्यौछावर कर दिया।

अशफ़ाक़ उल्ला खां की धर्म, जाति, पारिवारिक पृष्ठभूमि, शिक्षा-दीक्षा आदि से

जुड़ी पहचान गौण है। वे सबसे बढ़कर एक महान क्रांतिकारी थे। अशफ़ाक़ उल्ला खां को हम सदा एक महान क्रांतिकारी के रूप में याद करते आये हैं इसी रूप में उन्हें सबसे पहले और सदा याद करने की जरूरत है।

अशफ़ाक़ उल्ला खां, रामप्रसाद बिस्मिल, भगत सिंह आदि क्रांतिकारियों ने अपनी शहादत से भारत को अंग्रेजों से आजादी की लड़ाई का रास्ता दिखाया था। देश के लिए जीना और मरना सिखाया था। धर्म के नाम पर राजनीति करने वालों, दंगा-फसाद करने वालों, धर्म के आधार पर राष्ट्र की बात करने वालों को अशफाक उल्ला खां, भगत सिंह ने अपने समय पर ढंग से लताड़ा था। उन्हें मजदूर-मेहनतकशों, देश की आजादी की लड़ाई का गद्दार कहा था। आज उन्हें याद करने का मतलब है कि भारत के ऊपर मण्डराते ''काली गुलामी'' के खतरे के विरुद्ध तीखा संघर्ष छेड़ा जाय। हिन्दू फासीवाद को मुंहतोड़ जवाब दिया जाय। इस संघर्ष में वही जज्बा, वही हिम्मत, वही इंकलाबी फितरत दिखायी जाये जो अशफ़ाक़ उल्ला खां, बिस्मिल, भगत सिंह ने दिखलायी थी।

''काली गुलामी'' के खिलाफ लड़ने के लिए आज जरूरी है कि फासीवाद, फिरकापरस्ती, धार्मिक आतंकवाद व उन्माद के खिलाफ संघर्ष किया जाए। न केवल बहुसंख्यक साम्प्रदायिक तत्वों बल्कि अल्पसंख्यकों के बीच मौजूद साम्प्रदायिक तत्वों से भी डर कर लोहा लिया जाए।

नई श्रम संहिताओं का पुरजोर विरोध किया जाए।

नई आर्थिक नीतियों उदारीकरण-निजीकरण-वैश्वीकरण की नीतियों का डटकर विरोध किया जाए। इन नीतियों के जरिये देशी-विदेशी पूंजीपति भारत के मजदूर-मेहनतकशों को ही नहीं लूट रहे बल्कि भारत के प्राकृतिक संसाधनों पर तेजी से कब्जा कर रहे हैं। ऐसे में घोषणा की जाए भारत, देश के मजदूरों-किसानों का है न कि चंद पूंजीपतियों का।

काली गुलामी लाने वाले फासीवादी भारत के इतिहास, संस्कृति, सामाजिक ताने-बाने, सामाजिक सद्भाव को हर ओर से नुकसान पहुंचाकर किसी भी कीमत पर हिन्दू राष्ट्र बनना चाहते हैं। ऐसे में जरूरी है कि इनका हर कदम पर विरोध किया जाए।

अशफ़ाक़ उल्ला खां, रामप्रसाद बिस्मिल, भगत सिंह, गणेश शंकर विद्यार्थी की परम्परा को आगे बढ़ाया जाए।

अशफ़ाक़ उल्ला खां को आज याद करने का मतलब है देश को सरमायेदारी, इजारेदारी के चंगुल से मुक्त कराया जाय। गोरे-काले अंग्रेजों की लूट को हर-हमेशा के लिए खत्म कर दिया जाए। ''काली गुलामी'' लाने वालों के आकाओं को करारी शिकस्त दी जाय। फिर उस फर्ज को याद किया जाए जिसकी बात अशफ़ाक़ उल्ला खां ने की थी। लूट, जुल्म, खून चूसने वालों का खात्मा निहायत जरूरी है और उसके खिलाफ जंग फर्ज है।

अशफ़ाक़ उल्ला खां को याद करने का मतलब है सच्चाई का, न्याय का पक्ष चुनना।

उनको याद करने का मतलब है क्रांतिकारियों के उच्च आदर्शों का पालन करना। उनको याद करने का मतलब है देश के लिए बेहिचक होकर अपनी कुर्बानी दे देना। उनको याद करने का मतलब है अपने युग की आवाज को पहचानना उनको याद करने का मतलब है; जीने का मतलब सीखने के लिए मरने की हिम्मत रखना।

अशफ़ाक़ उल्ला खां के पैगाम को आज घर-घर पहुंचाने की जरूरत है। आइये! इस काम को आगे बढ़ाने के लिए हम दिलोजान से जुट जायें।

अशफ़ाक़ उल्ला खां अमर रहे!

इंकलाब जिंदाबाद!!

“बुजदिलों को ही सदा मौत से डरते देखा,

गो कि सौ बार उन्हें रोज ही मरते देखा।

मौत से वीर को, हमने डरते नहीं देखा,

तख्ता–ए–मौत पै भी खेल ही करते देखा।

मौत को एक बार जब आना है, तो डरना क्या है,

हम सदा खेल ही समझा किये, मरना क्या है।

वतन हमेशा रहे शादकाम, औ’आजाद,

हमारा क्या है अगर हम रहे रहे न रहे।”